अकबर की राजपूत नीति

अकबर पहला मुग़ल सम्राट था जिसने राजपूतों के प्रति योजनाबद्ध नीति अपनाई। अकबर की राजपूत नीति के निर्माण में विभिन्न कारकों ने भाग लिया। ऐसा देखा गया कि समकालीन राजपूत राज्यों ने अपने पड़ोसियों के प्रति पारंपरिक शत्रुता विकसित कर ली थी। यदि इसका उपयोग मुग़ल साम्राज्यवादी नीति के एक भाग के रूप में किया जा सके, तो मुग़ल शक्ति का विस्तार आसान हो सकता है।

व्यक्तिगत रूप से, राजपूत दृढ़ योद्धा, बहादुर और साहसी थे। इसके अलावा वे ईमानदारी, शिष्टता और नेता के प्रति वफादारी जैसे अपने व्यक्तिगत गुणों के लिए भी प्रसिद्ध थे। इस प्रकार, राजपूत उन विदेशी करदाताओं से कहीं बेहतर थे जिन पर मुगलों को भरोसा था। ये विदेशी कर अक्सर व्यर्थ, क्रूर और क्रूर होते थे और संप्रभु के प्रति कम वफादारी दिखाते थे और अक्सर विद्रोही होते थे। राजपूतों के समर्थन से विदेशी लगान की समस्या से संतोषजनक ढंग से निपटा जा सका। इस प्रकार, अपने स्वार्थ के लिए, अकबर ने महसूस किया कि राजपूतों का समर्थन, सद्भावना और गठबंधन उनकी शर्तों पर भी प्राप्त करना आवश्यक था।

अकबर को एहसास हुआ कि राजपूतों को वश में किए बिना या उन्हें संतुष्ट किए बिना साम्राज्य का उसका सपना ठोस नींव पर नहीं बनाया जा सकता। इसके अलावा, साम्राज्य के सुदृढ़ीकरण के लिए एक राजनीतिक और सामाजिक संश्लेषण की आवश्यकता थी जिसे राजपूतों के सहयोग के बिना हासिल नहीं किया जा सकता था। यह कारक उन्हें अपनी राजशाही की विदेशी प्रकृति से छुटकारा पाने और इसे एक राष्ट्रीय में बदलने में भी मदद कर सकता है, जो बदले में, उन्हें लोकप्रिय समर्थन दिला सकता है और उनके राजवंश के शासन को मजबूत कर सकता है।

ऐसा कहा जाता है कि अकबर का जन्म एक राजपूत वंश के नीचे हुआ

था और इसलिए उसके मन में राजपूत वंश के प्रति कृतज्ञता और स्नेह की भावना थी। स्वभाव से, वह एक सहिष्णु और व्यापक सोच वाला परोपकारी शासक था, जो संयोगवश बहुसंख्यक हिंदुओं के साथ मित्रता बढ़ाने में गहरी रुचि रखता था।

राजपूत अधिकतर हिंदू धर्म के अनुयायी थे। उनके परिवार की उदार प्रवृत्ति और उनके शिक्षकों, विशेषकर अब्दुल लतीफ़ के प्रभाव ने उन्हें उनके प्रति उदार बना दिया।

अकबर का लक्ष्य हमेशा सुलह करना था, फिर भी, वह यह आभास नहीं देना चाहता था कि यह उद्देश्य उसकी किसी कमजोरी के कारण पैदा हुआ था। वह सुलह और मित्रता की इस नीति के आधार के रूप में अपनी अत्यधिक सैन्य श्रेष्ठता का प्रदर्शन करना चाहता था।

जो राजपूत राज्यों ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली, उनके साथ उदारतापूर्वक व्यवहार किया गया। जिन लोगों ने उसका विरोध करना चुना वे हार गए और उनके अभेद्य किलों पर कब्ज़ा कर लिया गया।

इसके अलावा, एक शासक जिसने अपनी हार के बाद भी समर्पण कर दिया, उसके साथ फिर से अच्छा व्यवहार किया गया, उसके पारिवारिक सम्मान का सम्मान किया गया और उसे अपने पूर्व क्षेत्र को बनाए रखने की अनुमति दी गई, उसे अपने आंतरिक प्रशासन में पूर्ण स्वायत्तता का आनंद लेने की अनुमति दी गई, जबकि अकबर ने किसी भी बाहरी आक्रमण के खिलाफ पूर्ण सुरक्षा की गारंटी दी।

यदि शाही सुरक्षा के कारणों से कुछ किलों को जब्त कर लिया जाता था और अपने पास रख लिया जाता था, तो उस शासक को अन्यत्र जागीरें देकर उदार मुआवजा दिया जाता था।

साथ ही, राजपूतों को शाही सरकार और विजय के युद्धों का बोझ साझा

करने के लिए आमंत्रित किया गया और जो सहमत थे, उन्हें उनकी क्षमता और स्थिति के अनुपात में उच्च पद और रैंक दिए गए। उन्हें सर्वोच्च मनसब और प्रांतों की गवर्नरशिप की पेशकश की गई थी।

मैत्रीपूर्ण संबंधों को बनाए रखने के इरादे से, उन्होंने राजपूतों को अपने नागरिक और सैन्य संगठन में नौकरियां स्वीकार करने के लिए राजी किया और यदि, संयोग से, शासक ऐसा सम्मान नहीं चाहता था और इसके बजाय अपने अनुयायियों और रिश्तेदारों की सेवाओं की पेशकश करता था, तो सम्राट ने उन्हें आसानी से स्वीकार कर लिया।

हालाँकि, राजपूतों के प्रति अकबर की नीति, उसकी महत्वाकांक्षा से उत्पन्न, कहीं अधिक उदार और मानवीय थी। अपने कार्यों से, उन्होंने साबित कर दिया कि उनकी उनके राज्यों पर कब्ज़ा करने या उनके सामाजिक, धार्मिक या आर्थिक जीवन में हस्तक्षेप करने की कोई इच्छा नहीं थी, बल्कि वह केवल प्रस्तावित शाही संघ के प्रति उनकी निष्ठा चाहते थे, जो उनके मन में सबसे ऊपर था। इस निष्ठा में चार पहलू शामिल थे।

शासकों को साम्राज्य में उनके योगदान के रूप में कुछ श्रद्धांजलि देनी पड़ती थी।

शासकों को अपनी विदेश नीति तथा विवादों को आपसी युद्ध द्वारा निपटाने का अधिकार छोड़ना पड़ा।

आवश्यकता पड़ने पर उन्हें शाही सेवा के लिए एक निश्चित सैन्य कोटा भेजना पड़ता था।

शासकों को स्वयं को साम्राज्य का अभिन्न अंग मानना चाहिए, न कि केवल व्यक्तिगत इकाइयाँ।

जारी.....